IJARETY

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY (IJARETY)

Volume 11, Issue 1, January 2024

Impact Factor: 6.421

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

INNO SPACE SJIF Scientific Journal Impact Factor

doi cross ref

निस्केयर NISCAIR

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY(IJARETY)

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

समसामयिक भारतीय कला पर लोक कला का प्रभाव

डॉ. अचल अरविन्द

चित्रकला विभाग (मां भारती पीजी कॉलेज), सेक्टर-8, महावीर नगर-3, कोटा (राजस्थान), भारत (इंडिया)

सारांश

लोक संस्कृति एवं लोकाचार का दार्ष्टिक निरूपण ही लोक कला है। जिस प्रकार साहित्य में समाज प्रतिबिम्बित होता है उसी प्रकार लोक कला में संस्कृति। भारतीय कला की ओर सिंहावलोकन करने का यह प्रथम अवसर रहा कि कलाकार ने आधुनिकता को संजोए हुए भी भारतीय समृद्ध कला परम्परा की ओर पलटकर देखा। इसी प्रकार पूरे भारत में अलंकरण से लेकर संस्कारों के माध्यम से बनने वाली अनेकों कला शैलियाँ हैं जिनसे कलाकारों के लिए 80 के दशक में सर्वाधिक प्रेरणास्पद प्रयोग किए गये। भारत में दृश्य कला की एक समृद्ध परम्परा है जिसकी अपनी भाषा है। आधुनिक कलाकार अपनी निजी भाषा का विकास करते हैं, किन्तु लोक कला में शाश्वत रहने का अनोखा गुण है जो कलाकार के हाथ से कार्य शुरू करते समय से ही सार्वभौमिकता एवं जन-जन तक पहुँचने का गुण लिए हुए आती है। भारत के कुछ कलाकार जो पारम्परिक ऊर्जा श्रोत की ओर लौटना चाहते हैं। इन कलाकारों में भारत की लघु चित्रकला, लोक कला, तंत्र व आदिम कला के प्रति रुझान है।

बीज शब्द : मतैक्य, सभ्यातिसभ्य, मोटिफ, उन्मुख, ब्रांकुसी, फँतासी, साफगोई, फाववादी, सर्वग्राह्यता, उपक्रमित।

प्रस्तावना

लोक कला एवं आधुनिक कला में कुछ तत्व समान रूप से विद्यमान रहते हैं तथा शास्त्रीय कला एवं आधुनिक कला के विकास के लिए इन तत्वों की सतत् आवश्यकता पड़ती रहेगी। क्योंकि हमारी परम्परागत कला आधुनिक कलाकारों को गति एवं दिशा देने का महान कार्य कर सकती है लोक कला एक जीवित बीज, दृष्टिगत शब्दकोष का पुस्तकालय तथा देखी जाने वाली वह भाषा है जिससे सदैव प्रेरणा प्राप्त की जा सकती है। लेकिन एक बात बहुत सोचनीय है कि लोक कला की नकल करना परम्परा एवं कलाकार की अभिव्यक्ति को भी पहुँचा सकता है आज की आवश्यकता लोक कला एवं आधुनिक कला के संवाद की है। सम्भव है कालान्तर में मानव मूलरूप से आदिम होने का प्रयत्न भी करे। अनेक संस्कृतियाँ आज ऐसा करने का प्रयत्न भी कर रही हैं। आज अमेरिका में ही देखें, नीग्रो संगीत वहाँ का प्रिय संगीत माना जाता है जिसमें जीवन को मूलरूप से जोड़ने का प्रयत्न दिखाई पड़ता है। इसी प्रकार लोक कला एवं आदिवासी कलाकृतियों से जुड़ना भी इसी उपक्रम में देखा जा सकता है। तभी तो हरबर्ट रीड ने लिखा है नीग्रो तथा बुशमैन की कला का प्रारम्भिक रूप सर्वाधिक प्राणवान होता है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य समसामयिक भारतीय कला पर लोक कला के प्रभाव का अध्ययन करना है।

मुख्य सार

लोक संस्कृति एवं लोकाचार का दार्ष्टिक निरूपण ही लोक कला है। जिस प्रकार साहित्य में समाज प्रतिबिम्बित होता है उसी प्रकार लोक कला में संस्कृति। धार्मिक मूल्य एवं विश्वास, पौराणिक कथाएं, पुनीत प्रतीक ओर पारम्परिक चलन इत्यादि वे मानदंड हैं जो कला में दृष्टिगत होकर संस्कृति की गहनता या सतहीपने का बोध कराते हैं। श्री शैलेन्द्र नाथ सामन्त के अनुसार श्लोक कला जन सामान्य विशेषतया ग्रामीण जनसमुदाय की सामूहिक अनुभूति की अभिव्यक्ति है। श्लोक शब्द को लेकर भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों में मतैक्य नहीं हो सका। लोक का अर्थ होना चाहिए जो सब मिलकर। लोक एक ऐसा व्यापक शब्द है जो भूभाग पर प्रसारित समस्त मानव समुदाय के अर्थ के रूप में प्रयुक्त किया गया तथा मानव परम्पराओं की श्रेष्ठ संस्कृति के विकास एवं संवर्धन का श्रोत है।

लोक कलाएं शास्त्रीय कलाओं का आधार तत्व रही हैं। शास्त्रीय कलाओं का विकास लोक कलाओ की क्रमिक विकास की परिणति रही है। विशेषकर भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो कुछ शैलियाँ निश्चित रूप से लोक कला में मिलती जुलती हैं। इसमें पोथी चित्रण (जैन शैली) के चित्रों में तो स्पष्ट रूप से लोक कला के अनेक तत्व समाहित हैं।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

आधुनिक भारतीय कला का यह सुखद एवं स्वस्थ समय है कि कलाकार भारतीय लोक कला, लघु चित्रों एवं जनजातीय कला के प्रति सजग हो चुके हैं। अन्यथा एक ऐसा भी समय था जब इन अप्रितिम कलानिधियों को असभ्यों की रचना कहकर तिरस्कृत किया जाता था। ऐसा लगता है कि आज के नागर और सभ्यातिसभ्य मनुष्य के अचेतन में कहीं न कहीं आदिम मनुष्य की छाया व्यक्तित्व हुआ बैठा है। इसका समर्थन मानव जाति विज्ञान (एथ्नोलॉजी) से भी प्राप्त होता है। संस्कृति के सन्दर्भ में आदिम कला के महत्व का पता टेलर की प्रिमिटिव कल्चर और फ्रेजर की 'गोल्डन बो' जैसी पुस्तकों से चलता है।

भारतीय आधुनिक कला के मर्म को अच्छी तरह समझने के लिए हमें लोक कला को भी समझना पड़ेगा, क्योंकि आज के बहुत से चित्रकार किसी न किसी रूप में लोक कला से प्रेरणा प्राप्त कर रहे हैं। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से लोक कला, बाल कला एवं जनजातीय कला ने आधुनिक कला को सुदृढ़ आधार प्रदान करना आरम्भ कर दिया था। चाहे वह यूरोप की स्थिति हो या भारतीय कला की ।

भारत में ब्रिटिश स्कूल की स्थापना के पीछे कोई स्पष्ट नीति नहीं थी उनका उद्देश्य एक ओर भारतीय कलाकारों को श्क्राफ्टमैन बनाना था, जिससे भारत की उच्च शिल्प प्रथा को समाप्त किया जा सके तथा दूसरी ओर रॉयल अकादमी का आधिपत्य चलाना भी था। यद्यपि कुछ अंग्रेज अवश्य थे जिन्होंने भारतीय कला के मर्म को समझा तथा भारतीय कलाकारों को अपनी कला से प्रेरणा लेने के लिए प्रेरित भी किया। क्योंकि ब्रिटिश पद्धति में छात्रों को नकल या यथार्थ की अनुकृति करने के लिए प्रेरित किया जाता था। भारतीय कला को नकारने के कारण ही ब्रिटिश पद्धति के विरुद्ध एक वातावरण तैयार हुआ जिसका अगुवा एक अंग्रेज ई.बी. हैवल था। हैवल के साथ अवनीनन्द्र टैगोर तथा आनन्दकुमार स्वामी का भी स्पष्ट मत था कि भारतीय कलाकारों को अपनी परम्परा की ओर देखना चाहिए। दूसरा कारण भारत में स्वतंत्रता के लिए छटपटाहट भी थी और स्वदेशी का बोलबाला भी था। इसीलिए कला में श्स्वदेशी की ओर देखने किया। यहाँ तक कि चीन, जापान एवं पारसी कला को अपनाया गया। अवनीनन्द्र नाथ टैगोर ने के लिए एक श्रोत भी मिल गया। कलाकारों ने पश्चिम की ओर न देखकर पूर्व की ओर दृष्टिपात ऐतिहासिक एवं साहित्यिक विषयों के लिए मुगल एवं राजपूत कला से प्रेरणा ली। भारतीय कला की ओर सिंहावलोकन करने का यह प्रथम अवसर रहा कि कलाकार ने आधुनिकता को संजोए हुए भी भारतीय समृद्ध कला परम्परा की ओर पलटकर देखा। स्वामीनाथन ने कहा था आधुनिकता की जो धारणा हमने पाश्चात्य से ली वह उचित नहीं प्रतीत होती। उसमें साम्राज्यवाद के काल को यूरोपीय राष्ट्रों ने अपने को सारी दुनिया के ऊपर थोपा और कई संस्कृतियाँ खत्म कर दीं। आधुनिक एवं सम-सामयिकता पर हमें अपनी परिभाषा बनानी होगी और उस परिभाषा में उन समुदायों की संस्कृतियों का समावेश भी कराना होगा जिसे हम पिछड़ा हुआ या लोक समझते हैं। हम जब तक यह मानकर नहीं चलते कि सम सामयिक संसार में उनकी दृष्टि का उतना ही महत्व है जितना की हमारी दृष्टि का और समसामयिकता की परिधि में दोनों दृष्टियाँ मिलकर जब तक एक नहीं हो पाती, तब तक कला का भारतीय स्वरूप उज्ज्वल नहीं होगा। हमें अपनी सांस्कृतिक जड़ों को सही दिशा में पहचानना है।

चित्र एवं मूर्ति में ही नहीं बल्कि लोक कला, लोक संगीत, लोक नृत्य एवं लोक साहित्य ने क्रमशरू संगीत, नृत्य, एवं साहित्य के विकास में स्थापित मान्यताओं या शास्त्रीयता के साथ घुलमिल कर जनमानस को प्रभावित किया तथा उसे अधिक स्वाद युक्त बना दिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् बहुत से कलाकार भारतीय ग्रामीण कला निधियों के प्रति संवेदनशील एवं जागरूक हुए। क्योंकि पाश्चात्य देशों की तुलना में भारतीय कला में जीवन एवं सौन्दर्य के प्रति घुसपैठ अधिक दिखाई देती है। तभी तो कला यहाँ पर संस्कार एवं परम्पराओं के साथ तारतम्य बनाकर अपना विकास कर पाई। बंगाल के विशनुपुर, मिदनापुर तथा कालीघाट में पट चित्र, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश एवं राजस्थान में साँझी, अहोई तथा दीवाली के समय में बनाए जाने वाले मिट्टी की दीवारों पर मोटिफ बनाने की परम्परा बिहार में मधुबनी के लोकचित्र, महाराष्ट्र में वालीं चित्र, हैदराबाद में कलमकारी, राजस्थान में पिच्छवई, फड, पश्चिमी बंगाल की कथा 'एम्ब्रोइडरी पंजाब की फुलकारी एवं चम्बा के रूमाल, कला की अमूल्य धरोहर है जिनसे भारतीय कलाकारों ने निःसन्देह प्रेरणा प्राप्त की। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के टेराकोटा, बस्तर के धातुशिल्प तथा पश्चिमी बंगाल, आसाम, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश एवं हिमाचल प्रदेश के लकड़ी की खुदाई, मिट्टी के खिलौने, फर्श पर अलंकरण एवं धातुशिल्प की समृद्ध परम्पराओं ने भी कलाकारों के लिए नए द्वार खोले। इसी प्रकार पूरे भारत में अलंकरण से लेकर संस्कारों के माध्यम से बनने वाली अनेकों कला शैलियाँ हैं जिनसे कलाकारों के लिए 80 के दशक में सर्वाधिक प्रेरणास्पद प्रयोग किए गये।

भारतीय आधुनिक कला में लोकतत्व को समाहित करने में शांतिनिकेतन के कलाकारों ने आरम्भिक प्रयोग किये। नन्दलाल बोस का स्पष्ट मत था कि मैं जो कि चित्रित करता हूँ वह पूर्णतया भारतीय होना चाहिए। यदि नए आकार नहीं आते तो अच्छा है कि परम्परा का पुनरांकन किया जाए। परम्परा बीज का बाहरी आवरण है जिसमें नए जीवन का भ्रूण होता है। यह आवरण भ्रूण को वर्षा-गर्मी अथवा किसी अन्य हानि से बचाता है। जब यह अखण्डित एवं पूर्ण हो जाता है कठोर आवरण को भेदकर भ्रूण बाहर आ जाता है। इसी प्रकार कला में भी वह ऊर्जा है कि परम्परा को भेदकर नयी कला के रूप में निकल सके। इसीलिए परम्परा और आधुनिक कला एक दूसरे की विरोधी नहीं है बल्कि वह एक दूसरे की सहायता करती हैं। आधुनिक को बनाए रखते

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

हुए भी नन्दलाल बोस ने कला भवन में अपनी कक्षा में तैल रंगों को प्रतिबंधित कर दिया तथा वहाँ वातावरण में भारतीयता की महक को भर दिया। नन्दलाल ने पारम्परिक कला का आद्यन्त रूप से अध्ययन किया कि उस कला को समझ कर उसके रचनात्मक तत्व प्राप्त किए जा सकें। एक ओर उन्होंने शास्त्रीय कला की नियमबद्धता को अपनाया तो दूसरी ओर आधुनिक कला की स्वतंत्रता को भी अपनाया। उनका स्पष्ट मत था कि आधुनिकता का तात्पर्य परम्परा को तोड़ना नहीं बल्कि उसके अन्तरतम तक जाना है । परन्तु वह मूलत: शास्त्रीय कला की अपेक्षा आधुनिक कला से अधिक जुड़े रहे उनके चित्रों में उनके व्यक्तित्व की स्पष्ट झलक दिखाई पड़ती है तथा उनके तूलिकाघात एवं रेखाएं निजस्व लिए हुए रहती हैं। हरिपुरा कांग्रेस अधिवेशन के लिए नन्दलाल ने लोक कला से प्रेरित होकर चित्रण किया था। उनके चित्रों में ग्रामीण भारत की झलक स्पष्ट दिखाई देती है चाहे वह चित्र विषय हो या चित्र पद्धति जैसे रेखा एवं रंगों का प्रयोग। भारतीय लोक कला में वह तत्व है जो मात्र बाह्य आँखों द्वारा नहीं देखा जा सकता है, बंगाल के अनेक कलाकारों ने इस अनुभव को प्राप्त किया तत्पश्चात् ही उनके कला संसार में परम्परागत भारतीय कला का प्रभाव सिर चढ़कर बोलता रहा। यहाँ नन्दलाल बोस, रामकिंकर बैज तथा यामिनीराय के दृष्टांत दिए जा सकते हैं।

भारत में दृश्य कला की एक समृद्ध परम्परा है जिसकी अपनी भाषा है। आधुनिक कलाकार अपनी निजी भाषा का विकास करते हैं, किन्तु लोक कला में शाश्वत रहने का अनोखा गुण है जो कलाकार के हाथ से कार्य शुरू करते समय से ही सार्वभौमिकता एवं जन-जन तक पहुँचने का गुण लिए हुए आती है। लोक कला के सीधे-सीधे आकार, लोक लुभावन रंग योजना, मस्तिष्क में सीधा तीर की तरह प्रभाव छोड़ते हैं। उनका संयोजन सपाट है, जो कहीं ऊपर तथा कहीं नीचे से आकारों को देखते हुए बनाते हैं। उनके आकार एक दूसरे के ऊपर चढ़े हुए किन्तु लयात्मक होते हैं। एक ही चित्र में कई क्षितिज या श्आई लेवलश् हो सकते हैं या एक ही चित्र में घर के आन्तरिक एवं बाह्य परिप्रेक्ष्य को बड़े अनोखे किन्तु लयात्मक ढंग से बनाया जाता है। रंग अधिकतर प्राथमिक या उनके मेल से ही प्रयुक्त किए जाते हैं। आकार बिखरे हुए भी एका का बोध करते हैं। आधुनिक कला व्यक्तिवादी है जबकि लोक कला में जन साधारण को लेकर चलने के गुण हैं। क्या आधुनिक कला में जन-साधारण को लेकर चलने के गुण आने चाहिए? यदि हाँ तो लोक के उस तत्व को आधुनिक से जोड़ना पड़ेगा। अनेक कलाकारों ने इस तथ्य को समझा तथा लोक की ओर उन्मुख हुए। यह बात तो सर्वसिद्ध है कि लोक में वह तत्व हैं जो सर्वग्राह्य हैं तभी तो वह सदियों से आज भी अपना निजस्व बनाए हुए है जबकि आधुनिक कला पल-पल परिवर्तित होती नजर आती है। यद्यपि परिवर्तन गति एवं रचना धर्मिता का सिद्धान्त होता है, फिर भी लोक कला परिवर्तन करते हुए भी अपनी सर्वग्राह्यता बनाए रखती है।

लोक कला का जादुई संसार कहीं-कहीं एक तपस्या के समान होता है। दृष्टांत के लिए गुजरात एवं मध्यप्रदेश में जनजातियों में पिथौरा बाबा के चित्र बनाते समय 10 से 12 कलाकार पृष्ठभूमि में बजते संगीत के साथ ही चित्रण करते हैं। कलाकार दीवार को बड़ी पवित्रता के साथ चित्रित करते हैं। एक चाकू से चित्रण आरम्भ किया जाता है। उनके अपने ब्रश होते हैं। रंग घोलने के लिए पत्तियों से बने बर्तनों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार कलाकर्म एक प्रकार के संस्कारों के रूप में उपक्रमित किए जाते हैं, तथा साधना की तरह चित्रण किया जाता है।

आधुनिक कलाकारों में सर्वप्रथम यामिनीराय का नाम आता है। उन्होंने अपने रचना संसार को लोक कला के साथ जोड़ दिया। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार अफ्रीकी जन जातीय कला ने पिकासो, गोगा, फाववादी एवं ब्रांकुसी को प्रभावित किया। बंगाल के कालीघाट के चित्रों ने उन्हें इतना प्रभावित किया कि अंग्रेजी पद्धति में पढ़ने के बावजूद उन्होंने अकादमिक पद्धति से चित्र बनाना छोड़ दिया। यामिनी राय के चित्रों में लोक कला के रंग, रेखाएं, धरातल सभी कुछ नजर आता है। वे पूरी तरह से लोक कला पर सम्मोहित हो गए। ठेठ भारतीय पद्धति से चित्र बनाने वाले वे पहले चित्रकार थे। इसलिए उनकी कला को श्पापुलर आर्टश् कहें तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। लोक कला को किसी कलाकार ने इतना सम्मान नहीं दिया जितना यामिनी राय ने दिया। यामिनी राय ने अपनी स्वतंत्र चित्र भाषा विकसित कर ली। उन्होंने लोक एवं आधुनिक की भाषा को भलीभाँति समझ लिया था इसीलिए उन्हें भारतीय आधुनिक कला का पितामह कहा जाता है। जबकि उनके चित्र सीधे-साधे एवं लोक लुभावन हैं। वे एक मात्र भारतीय चित्रकार थे जिन्हें यूरोप में सबसे अधिक जाना और समझा जाता है। यामिनी राय लोक कला से इसलिए भी प्रभावित हुए क्योंकि लोक कला कोमलता, विविधता एवं सार्वजनीनता के गुणों से सम्पन्न होती है।

1980 के दशक में भारतीय कलाकार लोक कला से अधिक जुड़े क्योंकि लोक कला में भारतीयता की महक अधिक रहती है। कलाकारों ने अपनी रचनात्मकता में लोक कला एवं जनजातीय कला को बड़े फैशन के रूप में स्थान दिया। यह स्थिति केवल चित्र एवं मूर्ति में ही नहीं बल्कि संगीत जैसी कलाओं में भी है। लोक कला के आकारों को उसकी डिजाइन, सौन्दर्य और गुण के कारण कलाकारों ने उसे अपनाया। यामिनी राय के बाद अनेक कलाकारों ने अपने आसपास की लोक कला का अध्ययन कर अपनी चित्रभाषा विकसित करने का प्रयास किया। बहुत से कलाकारों ने लोक कला के सरल रूपों को ज्यों का त्यों भी उतारा। कलाकारों ने यह सहर्ष स्वीकार किया कि उन्होंने लोक कला से प्रेरणा प्राप्त की है। कला संस्थान भी लोक कलाकारों को बुलाकर विद्यार्थियों को लोक कला की बारीकियों को समझाने का प्रयास करते हैं। कई सांस्कृतिक केन्द्र भी आधुनिक कलाकारों एवं लोक

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

कलाकारों को एक साथ कार्यशालाओं के लिए भी आमंत्रित करते हैं। उत्तर पूर्व सांस्कृतिक केन्द्र में कई वर्षों पूर्व पटना कला महाविद्यालय में इस तरह का आयोजन भी किया था जिसमें मधुबनी, उड़ीसा, बंगाल के पटुआ कलाकार तथा कुछ आधुनिक चित्रकारों ने एक साथ मिलकर कार्य किया था। सचमुच कला के इस आपसी संवाद की इस समय बहुत आवश्यकता हो रही है। आधुनिक कलाकार यह समझ सकते हैं कि लोक कलाकारों के रंग चटक-मटक, नैतिक मूल्य के भार से उन्मुक्त उल्लास की अभिव्यक्ति, भाव, वेग और रस की धाराएँ सब कुछ उभर कर आते हैं। ऐसी कला सरल एवं इन्द्रिय ग्राह्य होती है। शायद आधुनिक कला इन्हीं अवयवों की खोज में लोक कला से समीपता बनाने के प्रयास में लगी है। सिद्धान्त विहीनता भी एक तत्व है जो लोक कला एवं आधुनिक कला को समीप लाने का कार्य करता है। आधुनिक कला में सिद्धान्त विहीनता या तो बाल कला से आई या फिर लोक कला या जनजातीय कला से।

नन्दलाल और यामिनी राय के बाद विनोद बिहारी मुखर्जी के चित्र भी लोक कला से प्रभावित रहे। असित कुमार हाल्दर, मसोजी, रामेन चक्रवर्ती, मुकुल डे तथा मनीषी डे के चित्र विषय लोक के लोग थे, किन्तु वे तकनीक में लोक कला से अलग थे। 1950 के आसपास, बी.सी. सन्याल, हुसैन एवं श्यावक्ष चावड़ा आदि ने लोक कला की रेखाओं से प्रेरित होकर अपनी कला में सशक्त रेखाओं को प्रधानता दी। भारतीय लोक कला में रेखाओं को महत्व एवं छाया प्रकाश को स्थान नहीं दिया गया। इन कलाकारों ने भी रेखाओं को महत्व प्रदान कर पश्चिमी छाया प्रकाश के सिद्धान्त का तिरस्कार किया।

भारत के कुछ कलाकार जो पारम्परिक ऊर्जा श्रोत की ओर लौटना चाहते हैं। इन कलाकारों में भारत की लघु चित्रकला, लोक कला, तंत्र व आदिम कला के प्रति रुझान है, जाहिर है इनके रुझान का अलग-अलग महत्व है लेकिन कारण उसका एक ही है परम्परा से ऊर्जा ग्रहण करना। इन कलाकारों में हुसैन, मोहन सामंत, लक्ष्मण पै, के. के. हैब्बर, सतीश गुजराल, जे. सुल्तान अली, ए. रामचन्द्रन, सुरुचि चांद, गुलाम मोहम्मद शेख, भूपेन खक्खर, जोगेन चौधरी, गौतम बाघेला, प्रभाकर कोल्टे, एम. बाला सुब्रहमण्यम, जयन्त पारिख कांति पांचाल, जयश्री बर्मन सहित अनेक कलाकार हैं जो किसी न किसी रूप में लोक कला से प्रेरित हुए।

माधवी पारेख सरल रेखाओं की ओर झुकीं। उन्होंने बड़े कैनवास पर लोक कला के आकार गदे। इम्ब्रायडरी बिन्दु एवं छोटी-छोटी रेखाओं के माध्यम से उन्होंने लोक आकार बनाए। इसी प्रकार जोगेन चौधरी ने बंगाल के पटुआ चित्रकारों के विशिष्ट आकारों, उनकी चित्रमय भाषा तथा भाव-भंगिमाओं को बखूबी समझा। कल्पना तथा यथार्थ का अनोखा समन्वय उनके चित्रों में दिखता है। उनके चित्र कभी-कभी कैरिकेचर की तरह लगते हैं। बंगाल के पटुआ चित्रकारों के चित्रों का सारतत्व एवं सुगन्ध जोगेन चौधरी के चित्रों में परिलक्षित होता है।

जे. स्वामीनाथन के अथक प्रयास से भारत भवन भोपाल में आदिवासी एवं लोक कला की कलाकृतियों को संग्रहीत कर उन्हें उचित स्थान एवं महत्व प्रदान किया गया। जे. स्वामीनाथन जैसे कलाकारों ने भारतीय कला के मर्म को समझा। उन्होंने न केवल इन कलाओं को प्रश्रय दिया बल्कि अपनी कला में भी लोक कला के तत्वों को आत्मसात किया। वे आदिवासी कला में इस तरह खो गये थे कि लोग कहने लगे कि ष्यह मनुष्य जो स्वामी जी के अन्दर हैं कौन? शहरी या आदिवासी ? जिस प्रकार सल्वाडोर डाली ने अतियथार्थवाद को जिया उसी प्रकार स्वामीनाथन भी आदिवासी कला में जिये। उन्होंने 1966 के कोन्ट्रा के पहले अंक में लिखा था मैं वहाँ खड़ा हूँ, जहाँ पहला आदमी अकेला खड़ा था? अपनी विभीषिकाओं का सामना करता हुआ। यह पहले आदमी की तरह खड़े होना और चित्र बनाना है। यह आदिवासी कलाकार की तरह खड़ा होना और चित्र बनाना है। स्वामीनाथन के चित्रों में मध्यप्रदेश के आदिवासी की आत्मा बोलती है। उनके चित्रों में लोकतत्वों का यथावत चित्रण नहीं बल्कि लोक तत्वों को आत्मसात करने के पश्चात् एक नयी रचना की आधारभूमि में उनके चित्र निर्मित हुए। इसलिए लोक तत्वों के साथ उनके चित्रों में आधुनिकता अधिक दिखाई पड़ती है स्वामीनाथन ने कला के मूल रूप को पा लिया था। वह एक बार लिखते हैं, ष्मुझे लगता है कि भारत में सांस्कृतिक चेतना का एक जबर्दस्त विस्फोट हो रहा है, यह पाश्चात्य जगत की आधुनिकता की परिकल्पना को उठाकर परे फेंक देगी और बता देगी कि विश्व की संस्कृतियों को एक रूप करने की साम्राज्यवादी शक्तियों की कोशिश उचित नहीं है।

तांत्रिक चित्रकारों ने प्रतीकों, ज्यामितीय आकार तथा लिपियों का आलम्बन लेकर चित्रों की रचनाएं कीं। तांत्रिक कला में जिन प्रतीकों का प्रयोग बहुतायत में किया गया उनमें शंख, चक्र, स्वास्तिक, कलश, सूर्य, चन्द्र एवं योनि इत्यादि प्रमुख हैं। लोक कला एवं जनजातीय कला में ये सारे प्रतीक कहीं न कहीं अवश्य विद्यमान हैं। उपासना हेतु निर्मित किए गये चित्र हों या फिर दीवारों को सजावट के लिए उभारे गये मौटिफ हों, उनमें ये प्रतीक आज भी प्रचलित हैं। प्राणनाथ मांगों ने लिखा था श्वीरेन डे और जी. आर. सन्तोष की कलाकृतियों में और सीमा तक एस. एच. रज़ा के चित्रों में, जिन्होंने एक आध्यात्मिक तथा अतिअलौकिक शैली के लिए अपने पहले की रूढ़िवादी शैली का परित्याग कर दिया एक स्पष्ट व समतल चित्रात्मक सतह की अभिव्यक्ति है जो स्वदेशी दृष्टिकोण के अधिक निकट हैं। के. सी. एस. पणिकर यद्यपि अमूर्तवादी तांत्रिक कलाकार हैं किन्तु वह रेखा के प्रयोग में लोक कला से समीपता बनाए हुए हैं। बद्रीनारायण के चित्रों में मोटी रेखाएं तथा लोकभाषा की फँतासी को दर्शाया गया है। उनके चित्र

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

तमिलनाडु कोटा मूर्तियों से प्रभावित हैं। इसी प्रकार जे. सुल्तान अली के चित्रों में भी लोक, जनजातीय तथा प्रागैतिहासिक कला के तत्व मिलते हैं। के.जी. सुब्रहमण्यम और गुलाम शेख पारम्परिक तकनीकों के प्रयोग में अपना लक्ष्य नहीं देखते बल्कि वे एक माध्यम मानते हैं जिससे वे नाटकीय एवं विरोधाभाषी स्थिति को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। सुब्रह्मण्यम ने सामान्य विषयों में उच्च कोटि के कलात्मक बिम्बों की रचना की और वे अपनी अभिव्यक्ति को अधिक वास्तविकता प्रदान करने के लिए चित्रों में प्रतीकों एवं रूपकों के साथ अपने बुद्धिचातुर्य का प्रयोग भी करते हैं। उनके टेराकोटा के रिलीफ तथा ग्लास पेन्टिंग में लोक तथा जनजातीय कला की तकनीक एवं बिम्बों को सहेजा गया है। लोक कला तथा जनजातीय कला ने उनके रचनात्मक विकास में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया।

'गुलाम शेख के चित्र जीवन और उनके आसपास के वातवरण के जनसंकुल अथवा परिपूर्ण अंकनों का गीतात्मक साधारणीकरण है। उनकी कृतियाँ तकनीकी रूप से परिष्कृत कृतियाँ हैं जिनसे पहचानी जा सकने वाली वस्तुओं और घटनाओं का संयोजन होता है और जो विभिन्न चित्रात्मक युक्तियों के सर्वोत्तम उपयोग द्वारा कलाकार के जीवन के अनुभव की झलक प्रस्तुत करते हैं। उनके संयोजन हमें भारतीय मिनिएचर चित्रों की याद दिलाते हैं। चाहे वे संयोजन के क्षेत्र में हों या रंग के क्षेत्र में।

रामायण और महाभारत के जो चित्र हुसैन ने बनाए हैं उनमें मिनिएचर का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है आकृतियों के प्रयोग में हुसैन घूम फिर कर लोक कला के रेखांकन के समीप पहुँच जाते हैं। मिनिएचर की कल्पसूत्र व ताड़पत्रीय शैली (10-14वीं सदी) शास्त्रीय व लोक शैली के मिश्रण से पनपी हुसैन के चित्रों में इन मिनिएचर चित्रों का प्रभाव रंगाकन में विशेष रूप से परिलक्षित होता है। उनकी चमकीली रंग पट्टिकाओं की परम्परा जर्मन अभिव्यंजनवाद एवं राजस्थानी शैली के निकट से सम्बद्ध है।

के. श्रीनिवासलु के चित्र लोक कला तथा मिनिएचर के प्रभाव लिए रखते हैं। सपाट रंगाकन पद्धति मोटी रेखाओं के आकृतियों के निरूपण में लोक कला के अधिक समीप पहुँच जाते हैं। आंखों के चित्रण में वे जैन कल्पसूत्र के चित्रों से बहुत प्रभावित हैं। चेहरे से बाहर निकली हुई आंखें एक पारम्परिक चित्रभाषा का एक रूप धारण कर लेते हैं।

रामशब्द सिंह के पूर्वी उत्तर प्रदेश के टेराकोटा खिलौनों, या मंगल कार्यों के समय बनाए गए लोक चित्रों से प्रेरणा प्राप्त करते हैं। कलाकार स्वयं ग्रामीण परिवेश से जुड़ा होने के कारण लोक कला के मर्म तथा उनके सौन्दर्य से अभिभूत होकर नए तरीके से चित्र बनाते हैं। चित्रों में टैक्सचर के प्रयोग से तथा आकारों में गोरखपुरी टेराकोटा खिलौने से युक्त उनके चित्रों में भारतीयता की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। रंगाकार पद्धति में भी वे लोक कला प्रमुख रंगों (प्राथमिक) के आसपास के रंग ही लगाते हैं। यद्यपि आधुनिक कला लोक कला से प्रेरणा एवं गुण लेकर सम्पन्न तो हो रही है परन्तु दूसरी तरफ अपना प्रभाव लोक कला पर छोड़कर लोक कला के मूल्यों का पतन भी कर रही है। एक सुखद तथ्य यह भी है कि हम पाश्चात्य अंधानुकरण से विमुख तो हुए तथा अपनी जड़ों को सींचने का प्रयास भी किया, परन्तु हमे यह देखना होगा कि आधुनिक कला के प्रभाव से लोक कला एवं आदिम कला की मौलिकता एवं सादगी अक्षुण्ण बनी रहे।

निष्कर्ष -

लोक कला के बिम्बों और आकारों के गुणों की बात करते है तो गहराई में जाकर उसे समझना पड़ेगा। तभी हम समकालीन कला में लोक कला का स्थान व उपस्थिति दर्ज करा पायेंगे। अतः हमे लोक कला के विकास के लिए लोक कला की गंध की तरफ आकर्षित होना पड़ेगा तथा लोक कला एवं आधुनिक कला के संवाद का प्रेरणा स्रोत बनकर समकालीन कलाकार को रचनात्मकता के लिए जागरूक एवं चिंतित होना आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शैलिगृणा सामथ, भारतीय लोक कला एवं न कला, विकास पब्लिकेशन आगरा 1996, पृ.सं. 73
2. श्री चमन, कला के अंश, राजहंस प्रेस पब्लिकेशन मेरठ 1993, पृ.सं. 39
3. डॉ गिर्राज किशोर अग्रवाल, कला निबंध, 1989, संजय पब्लिकेशन आगरा, पृ. सं. 104,109
4. कांतिचन्द्र पाण्डेय, स्वतंत्र कला शास्त्र, साहित्य पब्लिकेशन मेरठ, पृ.सं. 19
5. कमलेश माथुर, हस्त कला के विविधि आयाम, हैण्डीक्रॉफ्ट सोसायटी नई दिल्ली, 2002, पृ.सं. 67
6. गुलाब कोठारी, राजस्थान की बहुरंगी कला परम्परा, पत्रिका जयपुर, 2004, पृ.सं. 14
7. डॉ हरद्वारी लाल शर्मा, काव्य और कला, प्रकाश पब्लिकेशन बरेली 1999 पृ.सं. 43
8. जशलीन धमिजा - ''भारतीय लोक कला एवं क्राफ्ट'' साहित्य पब्लिकेशन मेरठ 1996, पृ.सं. 54
9. डॉ हृदय गुप्त, देशज कला, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर, 2018, पृ.सं.40
10. निर्मला डोसी, लोक कलाकारों के रंग ''राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली 2011, पृ.सं. 59
11. भवानी शंकर शर्मा, लोक कला में मांडणे, नवजीवन पब्लिकेशन जयपुर पृ.सं. 40-42
12. डॉ राधारानी शर्मा, हाड़ौती की लोक कला में मांडणे, नवजीवन पब्लिकेशन जयपुर पृ.सं.19, 20, 22
13. वसुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला, पृथ्वी प्रकाशन वाराणसी 2015 पृ.सं. 32

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

14. ज्योतिष जोशी, भारतीय कला के हस्ताक्षर, पब्लिकेशन डिविन गर्वनमेन्ट ऑफ इण्डिया दिल्ली 2013, पृ.सं. 26
15. प्रो. सोनू द्विवेदी 'शिवानी' समकालीन भारतीय कला, भारती प्रकाशन वाराणसी-2022, पृ.सं.47,49
16. डॉ निरंजन कुमार सिंह, समकालीन कला के लोकाधार मेखला प्रकाशन, नई दिल्ली 2007, पृ.सं. 24

IJARETY

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor

doi crossref

निस्केयर NISCAIR

International Journal of Advanced Research in Education and Technology

ISSN: 2394-2975 **Impact Factor: 6.421**

www.ijarety.in editor.ijarety@gmail.com